योगशास्त्र सार्वभौम एवं सार्वकालिक शास्त्र है। अतएव प्राचीन काल से अद्यावधि इस शास्त्र ने मानवमात्र को आन्दोलित एवं आकर्षित किया है। राजनैतिक एवं भौगोलिक दृष्टि से भी इस शास्त्र पर आधारित मता. ने प्रायः सम्पूर्ण एशिया को प्रभावित किया है। इन प्रभावशाली मता. म. पतंजलि योग एवं बौद्ध योग दोना. का महत्वपूर्ण स्थान है। बौद्ध योग मत जहाँ नास्तिक दर्शना. के योगशास्त्र सम्बन्धी सिद्धान्ता. का आधार स्तम्भ है वहीं पातंजल योगदर्शन आस्तिक दर्शना. के यौगिक सिद्धान्ता. का प्रतिनिधित्व करता है।

बौद्ध दर्शन का उदय वैचारिक जगत् के एक क्रान्तिकारी संक्रमण का परिणाम है। प्राचीन वैदिक एवं समकालीन मत एवं उपमता. के सैद्धान्तिक आन्दोलन के परिणामस्वरूप बौद्ध दर्शन के सिद्धान्त भारतीय वैचारिक क्षितिज पर उदित हुए। बुद्ध के ये विचार जहाँ सैद्धान्तिक दुरुहताआ. से मुक्त हैं वहीं व्यावहारिक धरातल पर खरे उतरते थे। उन्हा.ने दार्शनिक बुद्धि विलास के विषया. यथा– ईश्वर, जगत्, आत्मा को अव्याकृत कहकर उपेक्षित किया एवं मानव मात्र के जीवन को प्रभावित करने वाले बिन्दुआ. पर सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक विवेचन प्रस्तुत किया मानव जीवन म. दुःख की अवश्यम्भाविता का अनुभव कर दुःख की नित्यता की स्थापना की। दुःख की नित्यता की स्थापना ही बौद्ध दर्शन का आधार स्तम्भ है एवं नित्य दुःख के हेतु, दुःख का निरोध एवं निरोधगामिनी प्रतिपत् का विवेचन उसका विकास अर्थात् सम्पूर्ण बौद्ध दर्शन का विकास इन चार आर्यसत्या. का विवेचन ही है, इसके सम्यक् विवेचन के लिए बौद्ध ने मध्यमाप्रतिपद्, त्रिस्कन्ध, अष्टांगिकमार्ग, प्रतीत्य समुत्पाद, क्षणभंगवाद, नैरात्म्यवाद, अनीश्वरवाद आदि दार्शनिक सिद्धान्ता. की स्थापना की है। बौद्ध दर्शन की भांति ही पातंजल योग दर्शन भी प्राचीन वैदिक परम्परा के यौगिक सिद्धान्ता. की समवाहक सरणी की प्रतिनिधि रचना है। इस रचना म. सुदीर्घ वैदिक योग सम्बन्धी विवेचना की फलश्रुति हम. प्राप्त होती है। वस्तुतः महर्षि पतंजलिने वैदिक संहिताआ., ब्राह्मण ग्रन्था. एवं उपनिषदा. म. वर्णित यौगिक सिद्धान्ता. के निष्कर्षों को ही अपने ग्रन्थ म. सूत्रबद्ध किया है। वैदिक परम्परा मानव जीवन म. दुःख को आवश्यक तत्व स्वीकार करती है और दुःख की अत्यन्त निवृत्ति को जीवन का परम लक्ष्य निर्धारित करती है। पातंजल योग के भाष्यकारा. ने भी बौद्ध दर्शन की

भांति ही दु:ख चतुर्थव्यूहता स्वीकार की है। जिसके संकेत स्पष्ट रूप म. हम. पातंजल सूत्र म. प्राप्त होते हैं। जीवन की दु:खमयता एवं उसके निराकरण को ही जीवन का परम लक्ष्य स्वीकार करने के रूप म. बौद्ध दर्शन एवं पातंजल योग सूत्रा. म. अत्यन्त साम्य है। अतएव निष्कर्ष रूप म. हम कह सकते हैं कि उभय दर्शना. की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि म. अत्यन्त साम्य है। इतना ही नहीं इस पृष्ठभूमि पर विकसित विचारा. का आधार एवं सैद्धान्तिक लक्ष्य दोना. म. अत्यन्त समानता है। उदाहरण स्परूप बौद्ध दर्शन के सम्पूर्ण विकास का आधार **"सर्वमदु:खम्"** की अवधारणा है, पातंजल योग के समस्त चिन्तन का आधार दु:ख तो नहीं कहा जा सकता है किन्तु पतंजलि भी **'दुखमेव सर्वविवेकिन:'** कहकर संसार की दु:खमयता स्वीकार करते हैं। इसी प्रकार दोना. प्रस्थाना. का परमलक्ष्य दु:ख से आत्यन्तिक मुक्ति है। दु:ख से आत्यन्तिक मुक्ति को ही बौद्धयोग म. 'निर्वाण' नाम दिया गया है तथा पातंजल योग म. 'कैवल्य' कहा गया है।

निर्वाण अथवा कैवल्य के अधिगम का एक मात्र उपाय दोना. ही प्रस्थाना. म. समाधि को स्वीकार किया गया है। दोना. ही प्रस्थाना. ने आध्यात्मिक उन्नति एवं निर्वाण की उपलब्धि म. समाधि की उपादेयता एंव अद्वितीयता स्वीकार की है। बौद्ध दर्शन म. स्पन्दनशील चित्तवृत्तिया. का नियन्त्रण समाधि के अभ्यासा. से ही सम्भव माना गया है। इस अभ्यासा. म. शील विशुद्धि प्रमुख है। शील विशुद्धि को आध्यात्मिक उन्नति का प्रवेश द्वार कहा गया है। निर्वाण मार्ग म. शील विशुद्धि के उपरान्त चित्त विशुद्धि को माना गया है। चित्त विशुद्धि के कारक चतुर्विध ध्यान माने गये हैं। इसी प्रकार पातंजल योग म. वृत्ति निरोध एवं सत्वपुरुषान्यताख्याति को कैवल्य प्राप्ति का प्रमुख उपाय स्वीकार किया गया है।

बौद्ध दर्शन के हीनयान और महायान सम्प्रदाया. म. ध्यान को लक्ष्य म. रखकर मतभेद प्राप्त होते हैं। हीनयान म. जहां ध्यान का लक्ष्य अहर्त् पद की प्राप्ति माना गया है, वहीं महायान म. समाधि का लक्ष्य बोधिसत्त्व की उपलब्धि माना गया है। ध्यान का सूक्ष्म रूप बोधिसत्त्व की उपलब्धि माना गया है। ध्यान का सूक्ष्म विवेचन करते हुए बौद्धयोग म. त्रैधातुक जगत् एवं उसके अंगभूत चतुर्विध आयतन का सूक्ष्म रूप से विवेचन किया है। ध्यान की

सिद्धि के फलस्वरूप अधिगत समाधि की द्विविधता बौद्धयोग स्वीकार करता है। ये समाधि हैं- उपचार समाधि एवं अर्पणा समाधि। इनम. छह अनुस्मृति स्थान, स्मृतिया., आहार म. प्रतिकूल संज्ञा एवं चतुधातुव्ययस्थापन के द्वारा प्राप्त चित्त की एकाग्रता उपचार समाधि है। इस अवस्था म. साधक अपने चित्त के संयमन के लिए विविध कर्मस्थाना. पर चित्त को एकाग्र करता है तथा दृष्टि का परिशोधन करता है। उपचार समाधि के उपरान्त आगे घनीभूत एकाग्रावस्था अर्पणा समाधि कहलाती है।

पातंजल योग दर्शन म. जब ध्येय मात्र का प्रकाश एवं स्वरूप शून्य की भांति प्रतीत हो तब वह समाधि पदवाच्य होती है। पतंजलि की यह समाधि धारणा पर आधारित है। जिसे महर्षि पतंजलि ने **"देशबन्धश्चित्तस्य धारणा"** कहकर परिभाषित किया है। जिस स्थान, रूप, विषय म. चित्त वृत्ति द्वारा सम्बन्ध बना लिया जाय, इस सम्बन्ध की प्रथम अवस्था धारणा कहलाती है तथा उसका सतत् प्रवाह बन जाना ही ध्यान कहलाता है- **तत्रैकतानता ध्यानम्।** इस ध्यान म. तो चित्तवृत्ति का प्रवाह रहेगा, जिसम. चित्त, चित्तवृत्ति तथा चित्तवृत्ति का विषय तीना. की त्रिकुटी ध्याता, ध्यान एवं ध्येय विद्यमान रहते हैं। किन्तु जब दृष्टा दृश्य म. और दृश्य दृष्टा म. विलीन होकर स्वरूप शून्य की स्थिति को निर्मित होते है, वही स्थिति पातंजल मत म. समाधि है। यह द्विविध है सम्प्रज्ञात समाधि एवं असम्प्रज्ञात समाधि। इन दोना. समाधिया. का बौद्धयोगोक्त उभयविध समाधिया. म. अत्यन्त साम्य है। बौद्धयोग म. समाधि की अधिमुक्तिचर्या, मुदिता, विमला, प्रभाकरी, अर्चिष्मती, दुर्जया, अभिमुखी, दुरगमा, अचला एवं साधुमती ये दस भूमियां स्वीकार की गई हैं। पातंजल योग म. इनकी संख्या चार है- मधुमति, मधुप्रतीका, विशोका एवं संस्कारशेषान्या। इसी प्रकार समाधि के अवान्तर परिणाम के रूप म. बौद्धयोग परिमिताआ. को स्वीकार करता है तो पातंजल योग म. ऋतम्भरा प्रज्ञा को अध्यात्म प्रसाद स्वीकार किया है। जिस प्रकार बौद्धयोग म. शीलविशुद्धि को अध्यात्म का प्रवेश द्वार माना गया है, उसी प्रकार महर्षि पतंजलि क्रियायोग को समाधि की आधारभूमि मानते हैं। दोना. प्रस्थाना. के समाधि विषयक मन्तव्या., भेदा. एवं उपभेदा. तथा आधारभूमि को तुलनात्मक विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि दोना. ही प्रस्थाना. म. समाधि के स्वरूप, उनकी

द्विविधता, ध्यानभूमि एवं शील अथवा क्रियायोग की अनिवार्यता जैसे सिद्धान्ता. के प्रतिपादन म. अत्यन्त साम्य है। दोना. प्रस्थाना. म. समाधि को अनुभवगम्य माना गया है। प्रत्येक विवेकशील प्राणी के अनुभवा. म. विविधता स्वाभाविक है। यही वैभिन्नय बौद्धयोग एवं पातंजल योग की प्रतिपादन शैली म. प्राप्त है। इसे यदि हम योगबुद्धि से देख. तो यह परस्परपूरकता है और भेदबुद्धि से देख. तो परस्पर वैभिन्नय का आधार है।

बौद्ध योग ग्रन्था. एवं पातञ्जल योग ग्रन्था. के सम्बन्ध म. यह उक्ति उचित है कि ये योग के अनुभवाधारित व्यावहारिक ग्रन्थ हैं। अतएव सैद्धान्तिक विवेचन के साथ इन ग्रन्था. म. ध्यानभेद एवं ध्यानमार्ग म. समागत कठिनाइया. का भी सर्वाङ्गीण विवेचन प्राप्त होता है। ध्यानमार्ग के इन व्यवधाना. को बौद्ध योग म. पलिबोध एंव पातञ्जलयोग म. अन्तराय नाम से अभिहित किया गया हैं। नामभेद के अतिरिक्त इनकी संख्याआ. म. भी भेद है। बौद्धयोग म. पलिबोध की संख्या दस मानी गयी है तथा पातञ्जल योग म. योगान्तराया. की संख्या नौ एंव उनके सहविक्षेपभू: पाँच माने गये हैं। तात्विक दृष्टि से अध्ययन करने पर यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि पलिबोध एंव योगान्तराया. म. तात्विक साम्य है। वस्तुत: मन की विक्षेपकारी चित्तवृत्तियाँ तो योग मार्ग के पथिका. के लिये प्राय: समान ही रहती हैं। इतना अवश्य है कि सत्व, रजस् एंव तमस् वृत्तिया. के आधार पर इनकी मात्रा म. वैषम्य हो सकता है। सामान्यतया लोकसामान्य को प्रभावित करने वाली विभूतिया. को दोनो ही दर्शन योग म. विघ्न कारक मानते हैं।

बौद्ध योग म. कर्मस्थान (कम्मट्ठान) का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। पातञ्जल म. वर्णित धारणा की इस कर्मस्थान से समानता स्थापित की जा सकती है। मानवीय चित्तवृत्तिया. की विभिन्नता के आधार पर बौद्धयोग ग्रन्था. म. कर्मस्थाना. का अत्यन्त गम्भीर विवेचन किया गया है।

बौद्धयोग म. समाधि के उत्तरोत्तर उपब्रंहण एवं समाधिमार्ग म. समागत विघ्ना. के उच्छेदन हेतु कर्मस्थाना. के ग्रहण करने का विधान है। योग के साधनभूत इन कर्मस्थाना. की संख्या

बुद्धघोष ने चालीस मानी है। ये चालीस कर्मस्थान मानवीय मनोवृत्तिया. के आधार पर सात भागा. म. विभक्त किये गये हैं– 1. दस कसिण (पृथ्वीकसिण, आपोकसिण, तेजोकसिण, वायुकसिण, नीलकसिण, पीतकसिण, लोहितकसिण, ओदातकसिण, आलोककसिण एवं परिच्छिन्नाकाशकसिण), 2. दस अशुभकर्मस्थान (उद्घुमातक, विनीलक, विपुब्बक, विच्छिददक, विक्खायितक, विक्खित्तक, हतविक्खित्तक, लोहितक, पुमुवक एवं अट्टिक), 3. दस अनुस्मृति (बुद्धानुस्मृति, संघानुस्मृति, शीलानुस्मृति, त्यागानुस्मृति, देवतानुस्मृति, धम्मानुस्मृति, मरणानुस्मृति, कायगतानुस्मृति, आनापानानुस्मृति एवं उपशमानुस्मृति), 4. चार ब्रह्मविहार (मैत्री, करुणा, मुदिता एवं उपेक्षा), 5. चार आरूप्य (आकासानन्त्यायतन, विज्ञानानन्त्यायतन, आकिंचञ्ञायतन एवं नैवसंज्ञानासंज्ञायतन), 6. संज्ञा (आहार म. प्रतिकूलसंज्ञा), 7. ववट्ठाण (चतुर्धातुव्यवस्थापनभावना)। कहने का तात्पर्य यह है कि पातञ्जल योगोक्त धारणा ही बौद्धयोग म. कम्मट्ठान के रूप म. विकसित हुई। कर्मस्थाना. म. परिगणित चार ब्रह्मविहारा. का पातंजल योग प्रोक्त चार भावनाआ. से न केवल नाम साम्य है, अपितु स्वरूपसाम्य भी है। इतना अवश्य है ध्यान के अधिगम हेतु बौद्धयोग के विद्वाना. ने कर्मस्थाना. का जितना सूक्ष्म एवं गम्भीर विवेचन किया है वह पातंजल योग म. नहीं प्राप्त होता है।

समाधि की उपलब्धि हेतु एवं साधना के पथ पर अग्रसर होने के लिए साधक द्वारा सम्यक् कर्मस्थान का ग्रहण बौद्धयोग म. परमावश्यक माना गया है। शिष्य द्वारा सम्यक् कर्मस्थान के चयन के गुरुत्तर दायित्व का निर्वहन गुरु द्वारा किया जाता है। बौद्धयोग म. शिक्षा प्रदाता वैदिक गुरू की कल्पना के स्थान पर आध्यात्मिक पथ प्रशास्ता कल्याणमित्र की अभिनव कल्पना प्रस्तुत की है। कल्याण मित्र को परिभाषित करते हुए वहां कहा गया है कि प्रिय, गौरव एवं सम्मान का पात्र, धर्म, वक्ता, वचना. को सहने या गम्भीर प्रवचन करने वाला एवं अनुचित कार्यों म. लगाने वाला आदि भगवद् उक्त गुणा. से युक्त पूर्णरूप से हितैषी एवं सब की उन्नति चाहने वाला गुरू कल्याण मित्र कहलाता है। भगवान् बुद्ध ने स्वयं कहा है कि सम्यक् समबुद्ध ही कल्याणमित्र है तथा इसके सान्निध्य म. पहुंचकर जन्म–मरण, धर्म प्राणी बहुचक्र से मुक्त हो जाता है।

बुद्धघोष का मानना है कि बिना कल्याणमित्र के कर्म स्थान का ग्रहण नहीं किया जा सकता है और कर्म स्थान ग्रहण के बिना आध्यात्मिक प्रगति असम्भव है। बौद्धयोग म. शिष्य की कसौटी भी अत्यन्त प्रखर है। शिष्य के लिए आचार्य की हितेषनाआ. को यथारूप म. स्वीकार करना परमावश्यक माना गया है। शिष्यत्वापन्न साधक अलोभ, अदेष, अभोह, नैषकर्म्य, प्रविवेक एवं स्मरण आदि षड्विध अभ्यासा. से विध होना चाहिए। ये अध्यास्य बोधि की परिपक्वता एवं प्रभास्वरता म. सहायक माने गये हैं। बौद्ध योग, प्रवृत्तिया. के आधार पर, षड्विध शिष्या. की श्रेणियां निर्धारित करता है ये छः प्रकार के शिष्य हैं– 1. राम चरित्र, द्वेष चरित्र, मोह चरित्र, श्रद्धा चरित्र, बुद्धि चरित्र एवं वितर्क चरित्र।

पातंजल योगसूत्र म. सामान्यतया आध्यात्मिक मार्ग प्रशस्त गुरु का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है। सम्भवतः उन्हा.ने उपनिषदा. म. वर्णित गुरु के स्वरूप को यथावत् रूप म. स्वीकार कर गुरू के स्वरूप पर कुछ कहना आवश्यक नहीं समझा। इतना अवश्य है कि ईश्वर को परम गुरू मानकर वे गुरू की दो सत्ता स्वीकार करते हैं– लौकिक गुरु एवं ईश्वर। लौकिक गुरु, जो शिष्य के साधना मार्ग को प्रशस्त करता है। गुरुआ. का भी गुरु अर्थात् ईश्वर जिसके प्रति समर्पण म. पातंजल मत म. शीघ्र समाधि लाभ प्राप्त होता है। उभयविध प्रस्थाना. के गुरुविषयक एवं शिष्यविषयक मन्तव्या. के तुलनात्मक अनुशीलन से स्पष्ट है कि दोना. ही दर्शन योग मार्ग म. कुछ की अतिशय महत्ता स्वीकार करते हैं। पातंजल योग क्या.कि सूत्रात्मक पद्धति म. निबद्ध है, अतः केवल परम गुरु का पातंजल योगसूत्र म. विस्तार से विवेचन किया गया है तथा गुरु–शिष्य सम्बन्ध तथा स्वरूप पर विस्तार से विवेचन किया गया है। गुरू की कल्याण मित्रता एवं शिष्या. का वर्गीकरण बौद्धयोग की मौलिक अभिकल्पना है।

आध्यात्मिक उन्नयन एवं निर्वाण की उपलब्धि म. समाधि का महत्वपूर्ण स्थान हैं। अश्वघोष ने समाधि के महत्त्व को निरूपित करते हुए कहा है कि समाधि चित्त के आगन्तुक क्लेशा. का विश्वकम्पन करती है एवं चित्त को भ्रमित होने से बचाती है। यह समाधि बौद्धयोग म. द्विविध मानी गयी है। उपचार समाधि एवं अर्पणा समाधि। समाधि की भूमि के रूप म. ध्यान को स्वीकार किया गया है। यह ध्यान चित्त की पाँच भूमिया. से युक्त होता

है। ये पाँच भूमियाँ है,– वितर्क, विचार, प्रीति, सुख और एकाग्रता। ये चित्त की पांच भूमियाँ चतुर्विध ध्यान के हेतु मानी गयी है। इनम. प्रथम ध्यान पंच भूमिक होता है। द्वितीय ध्यान त्रिभूमिक होता है, तृतीय ध्यान द्विभूमिक एवं चतुर्थ ध्यान एक भूमिक माना गया है। पातंजल योग म. भी समाधि का विवेचन करते हुए चित्त की पांच भूमियां स्वीकार की गयी है– क्षिप्त, मूढ, विक्षिप्त, एकाग्र एवं निरुद्ध। वहाँ समाधि भी सम्प्रज्ञात एवं असम्प्रज्ञात भेद से दो प्रकार की मानी गई है। जो समाधि एकाग्रभूमिक चित्त म. सम्भव होती है तथा आलम्बन रूप से बुद्धि म. स्थित पदार्थ को पूर्णतया प्रकाशित करती है तथा अविद्या आदि समस्त क्लेशा. को नष्ट करती है, कर्म संस्कारा. को शिथिल करती है एवं साधक को असम्प्रज्ञात समाधि की स्थिति म. लाती है, वह सम्प्रज्ञात समाधि है। यह वितर्क, विचार, आनन्द एवं अस्मिता आदि से अनुगत होकर चार प्रकार की मानी गई है। समाधि म. अंगभूत ध्याना. के निरूपण म. बुद्धघोष ने अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है। पातंजल के सूत्रा. को इस क्षेत्र म. अब भी भाष्य की अपेक्षा है।

दुःखमय भवचक्र से मुक्ति के विषय पर समस्त भारतीय दर्शन एकमत हैं। सभी प्रस्थाना. म. मुक्ति को विविध नामा. से स्वीकार किया गया है। भगवान् बुद्ध ने इसे निर्वाण कहा है, जिसम. आध्यात्मिक जीवन की परमोदत्तता अभिलक्षित होती है। निर्वाण को परिभाषित करने म. बौद्ध सम्प्रदाया. म. भी कई मतभेद प्राप्त होते हैं। हीनयानिया. के मत म. क्लेशा. की अत्यन्तनिवृत्ति की अवस्था ही निर्वाण परवाच्य है। निकाय ग्रन्था. म. निरोध को ही निर्वाण कहा गया है। मिलिन्दप्रश्न म. निर्वाण को त्रिकालातीन, इन्द्रियातीत एवं अनिवर्चनीय कहा है, जिसे अर्हत् जन ही स्वविशुद्ध ज्ञान से जान सकते हैं। स्थावरवादिया. के मत म. निर्वाण असंस्कृत, शान्त, अनुभवगोचर, अवर्णनीय, अनुत्तम एवं भावरूप है। वैभाषिक मत म. प्रतिसंख्या निरोध को ही निर्वाण कहा गया है। सौत्रान्तिका. के अनुसार विशुद्ध ज्ञान के द्वारा उत्पद्यमान भौतिक जीवन का चरम निरोध ही निर्वाण है। महायान सम्प्रदाय म. हीनयान सम्मत निर्वाण के स्वरूप को अस्वीकृत कर अप्रतिष्ठित निर्वाण को स्वीकार किया गया हैं, जिसम. क्लेशावरण का तो क्षय होता है, किन्तु ज्ञेयावरण की सत्ता ज्या. की त्या. बनी रहती है।

महायानवादिया. के अन्यतम आचार्य नागार्जुन ने निर्वाण को अनिवर्चनीय माना है। महर्षि पतंजलि ने अपने योगसूत्रा. म. चार बार कैवल्य की चर्चा की है- **"तदाद्रष्टु: स्वरूपेऽवस्थानम्"** अर्थात् असम्प्रज्ञात समाधि के सर्वथा दृढ़ हो जाने पर पुरुष अपने स्वरूप म. प्रतिष्ठित हो जाता है, वह अवस्था ही कैवल्य है। योगदर्शन के द्वितीयपाद म. द्रष्टा एवं दृश्य के संयोग को दु:ख का कारण माना है तथा द्रष्टा एवं दृश्य के संयोग के हेतुभूत अविद्या के अभाव से द्रष्टा एवं दृश्य का संयोग भी स्वत: नष्ट हो जाता है, यही मोक्ष है। विभूतिपाद म. कैवल्य को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि बुद्धिसत्व एवं पुरुष की शुद्धि समान हो जाने पर 'कैवल्य' होता है। पुन: कैवल्यपाद के अन्तिम सूत्र म. कैवल्य का स्वरूप निरूपण करते हुये कहा गया है कि पुरुषार्थों से शून्य गुणा. का अपने कारण म. लीन हो जाना ही कैवल्य है। न्यायमत म. दु:ख, जन्म, प्रवृत्ति, दोष एवं मिथ्याज्ञान इत्यादि उत्तरोत्तर के नाश से पूर्व-पूर्व के नष्ट होने से दु:खादि के सर्वथा अभाव की स्थिति अपवर्ग है। वेदान्त मत म. मोक्ष ब्रह्मस्वभाव है। इस प्रकार मुक्ति की अभिव्यक्ति के सन्दर्भ म. सभी मत अत्यन्त साम्य रखते हैं।

विद्वाना. ने बौद्धधर्म एवं योगशास्त्र की लोकप्रियता एवं विस्तार का मूल कारण उनकी व्यावहारिक देशनाआ. को माना है। भगवान् बुद्ध ने दोना. अतिवादा. से बचते हुए मध्यमाप्रतिपद् का मार्ग सुझाया है। किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उन्हा.ने समाज की परम्पराआ. के विरोध म. इस मार्ग को प्रस्तुतकर के व्यवहारिक देशनाआ. को उच्छृंखल बना दिया। बौद्ध धर्म म. सर्वाधिक बल आचार-मीमांसा पर दिया जाता है। शील की प्रधानता एवं अष्टांगिक मार्ग के प्रतिपादन द्वारा भगवान् बुद्ध ने आचार की सीमाय. निर्धारित की हैं। हाँ इतना अवश्य है कि सामाजिक पाखण्डवाद एवं गुरुडा.ग के वे सर्वथा विरुद्ध थे। समाज म. विकसित समस्त पाखण्डा. का आधार यज्ञ एवं ईश्वर को मानते हुए उन्हा.ने दोना. की उपयोगिता असिद्ध कर कर्मफल की अवश्यम्भाविता को स्थापित किया। आर्यसत्या. की स्थापना द्वारा दु:खार्त प्राणी को दु:ख से मुक्ति का मार्ग दिखाया। पातंजल योग का अपर नाम अष्टांगयोग भी है। पातंजल योग का समस्त ताना-बाना इन अष्टांग यौगिक नियमा. (यम, नियम, आसन-प्राणायाम, प्रत्याहार,

धारणा, ध्यान एवं समाधि) से ही बुना गया है। ये अष्टांग योग के आन्तरिक साधन हैं तथा क्रियायोग (तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान) को योग का बहिरंग साधन कहा गया है। समाधि म. इन अन्तरंग नियमा. एवं साधना. की अत्यधिक उपयोगिता है। दोना. प्रस्थाना. की आचार–मीमांसा के तुलनात्मक अनुशीलन से इन म. ऊपरी तौर पर अनेक विभिन्नताय. के दिखाई देने पर भी इनम. एक तात्विक साम्यता दृष्टिगोचर होती है।

गुरु गम्भीर बौद्ध मत एवं योगगम्य पातञ्जल मत के योग विषयक सिद्धान्ता. का विश्लेषण अत्यन्त दुरूह एवं परिश्रम साध्य है। इन दोना. महनीय मता. के योगविषयक तत्वा. को विश्लेषित करते हुए हम कह सकते हैं कि भाषा के दृष्टिकोण से इन मता. म. भिन्नता दिखायी देते हुये भी वस्तुतः ये दोना. मत तात्त्विक दृष्टिकोण से एक ही है तथा एक ही लक्ष्य की प्राप्ति हेतु दोना. दर्शना. म. योग को आधारभूत साधन बनाया गया है।